IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बाबर पूर्व अयोध्या का इतिहास

प्रो० धीरज कुमार चौधरी*
कुँवर फतेह बहादुर**

***प्रोफेसर, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, आई.एस.डी.सी. इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज.**
****शोध छात्र, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, आई.एस.डी.सी. इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज.**

सारांश

अयोध्या मात्र एक नगर नहीं है। अयोध्या भूत, वर्तमान एवं भविष्य, सभी कालों में, इस धरा पर धर्म, अर्थ और राजनीति का केन्द्र है। अयोध्या जीवन है, सभ्यता है, संस्कृति है। अयोध्या हमारे दैनिक जीवन के मूल में है और इस अयोध्या को महान और सर्वश्रेष्ठ बनाते हैं प्रभु श्रीराम, जिन्होंने सरयू तट पर बसी इस अलौकिक नगरी अयोध्या में माता कौशल्या के गर्भ से जन्म लिया और तभी से यह अयोध्या, अयोध्या से अयोध्यापुरी हो गयी। पवित्र अयोध्या भूमि ने अनेक महान राजाओं को जन्म दिया है जिनमें महाराज भगीरथ हुए जिनके तप, त्याग, प्रण से माँ गंगा पृथ्वी लोक पर आयीं, सत्यवादी महाराज हरिश्चन्द्र हुए जिनके सत्य के आगे देव भी हार गये। अयोध्या जैन धर्म के पाँच तीर्थंकरों की जन्मस्थली भी है जिसमें प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव जी भी हैं। ऐसे अनेक महान राजाओं-महाराजाओं एवं तपस्वियों की भूमि है अयोध्या। इसी अयोध्या में महात्मा बुद्ध ने 16 वर्ष बिताये। यह अयोध्या अनेक धर्मों के सृजन की भी भूमि है।

मुख्य शब्द- साकेत, कोसल, अयोध्या, सरयू, सूर्यवंशी, मंदिर, धर्म, इक्ष्वाकु, मौर्य, शुंग, गुप्त, अवध।

हिंदुओं के लिए अयोध्या नामक शहर भारत के उत्तर प्रदेश राज्य में स्थित है। यह वह जगह है, जहाँ भगवान् राम पैदा हुए थे और वाल्मीकि रामायण में भी यही वर्णित है। अयोध्या का शाब्दिक अर्थ भी है 'अविजित'। हिंदुओं के लिए अयोध्या स्वर्ग का द्वार है और यह राम की तरह अमर है।

पुरातन भारतीय शास्त्रों के विभिन्न पदों में अयोध्या के महत्त्व के बारे में वर्णित है। वैष्णवों के पुरातन भारतीय शास्त्र गरुड़ पुराण में निम्न बातें वर्णित हैं-

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका ।

पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ॥

-गरुड़ पुराण 1,15,14

इस श्लोक में गरुड़ पुराण कहता है कि मोक्ष प्राप्ति के लिए इस धरती पर सात जगहें हैं, यानी अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवंतिका एवं द्वारावती।[1]

अयोध्या कोसल जनपद की एक नगरी थी जिसकी स्थापना का श्रेय स्वयं मनु को दिया गया है। परम्परागत रूप में इस मनु को सातवाँ मनु कहा गया है। ऐतिहासिक तथा साहित्यिक प्रमाणों से भी यह स्पष्ट विदित होता है कि अयोध्या एक प्राचीन नगरी है। अथर्ववेद और तैत्तिरीय आरण्यक में अयोध्या का एक प्रतीकात्मक वर्णन मिलता है जिसमें मानव शरीर को आठ चौकों और नौ द्वारों वाली देवताओं की नगरी अयोध्या बताया गया है।'

अष्टाचक्र नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।

तस्यां हिरव्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ॥

अयोध्या के नामकरण के सम्बन्ध में एक अन्य पौराणिक कथा है। कहा जाता है कि मनु ने अयोध्या नगरी को बसाकर उसका राज्य अपने ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु को दे दिया। इक्ष्वांकु के बाद उसका पुत्र विकुक्षि अयोध्या का राजा हुआ। इस विकुक्षि का एक दूसरा नाम 'अयोध' भी था और कुछ विद्वानों ने यह संकेत दिया है कि इस नगरी का यह नाम अयोध्या के कारण पड़ा। अयोध्या के नामकरण के सम्बन्ध में पौराणिक कथा है।[2]

अयोध्या के विविध रूप मिलते हैं जैसे- अयोज्झा, अयुज्झापुर, उज्झा, अ-यु-ज, अयुधा, अजोदह और अवध। बौद्ध पालि ग्रन्थों में अयोध्या का नाम अयोज्झा और अयुज्झा मिलता है। प्रारम्भिक जैन प्राकृत ग्रन्थों में अयुज्झा और उत्तरकालीन जैन ग्रन्थों में अयुज्झा और उज्झा दोनों नाम मिलते हैं। उत्तर कालीन जैन प्राकृत ग्रन्थ अवस्गचूर्णि और अवस्सनिज्जुति ग्रन्थों में सायेय और साकेत नामों का उल्लेख मिलता है। जैन ग्रन्थों में अयोध्या के कई नाम मिलते हैं जैसे- इक्खागभमि कोसल, विनीता रमपुरी और पदमपुरी आदि। जैन ग्रन्थ कल्पसूत्र में भी कोसल के ऋषभ तीर्थकर भूमि इक्खागभूमि का उल्लेख मिलता है।" चतुर्थ शताब्दी ई. के प्रारम्भिक जैन प्राकृत ग्रन्थ षौमचरित में अयोज्झा को इक्ष्वाकु वंश के राजा अजित की राजधानी तथा भारत (भरत) की नगरी बताया गया है। इसी ग्रन्थ में अयोध्या को कोसल तथा साकेत के पर्यायवाची के रूप में भी उल्लिखित किया गया है। संस्कृत ग्रन्थों में प्रायः अयोध्या नाम ही मिलता है। महाभारत तथा रामायण में अयोध्या क उल्लेख है। महाभारत में इसे इक्ष्वाकुओं की राजधानी तथा रामायण में अयोध्या को सरयू तट पर स्थित बताया गया है। कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य में अयोध्या और साकेत को एक ही अर्थ में प्रयुक्त किया है। मत्स्य तथा वायु पुराण में इसे इक्ष्वाकुओं की राजधानी तथा वृहत्संहिता में राम के पुत्र कुश द्वारा इसे दुबारा बसाए जाने का उल्लेख भी मिलता है। चीनी स्रोतों में इसे अ-यु-ज-अयुज (अथवा अवध) नाम से उल्लिखित किया गया है।

अयोध्या का एक नाम साकेत भी मिलता है। पाणिनि तथा पतंजलि ने साकेत की तरफ जाने वाले मार्गों का उल्लेख किया है। युग पुराण में साकेत का उल्लेख करते समय उसके सात राजाओं तथा यवन सैनिकों द्वारा उसके घेरे जाने का उल्लेख है। वायु तथा ब्रह्माण्ड पुराण में भी साकेत का नाम उल्लेख है। रघुवंश महाकाव्य में साकेत को अयोध्या के साथ समी.त किया गया है। हेमचन्द्र ने साकेत को अयोध्या और कोसल को एक ही माना है। यादव प्रकाश के शब्दकोश वैजन्ती में साकेत, अयोध्या, कोसल एवं नन्दिनी को पर्यायवाची माना गया है।

बौद्ध पालि ग्रन्थों में साकेत के अनेक उद्धरण मिलते हैं। संयुक्त निकाय में उसे कोसल राजा पसेनदि (प्रसेनजित) के साम्राज्य के अन्तर्गत बताया गया है। विनय तथा संयुक्त निकाय में साकेत के मार्गों, नदियों तथा उसे कोसल की राजधानी के रूप में उल्लिखित किया गया है। दीप निकाय में साकेत की गणना भारत के छः महाजनपदों में की गयी है।

'सोकेड' के रूप में। तिब्बती ग्रन्थों में गुजान शासक कनिक (कुशाण शासक कनिष्क) और लिग-वंश के शासक विजयकीर्ति द्वारा सोकेड को अधिकृत किये जाने का उल्लेख है जहाँ विजयकीर्ति में अनेक बौद्ध विहारों को प्राप्त किया था। चीनी स्रोतों में साकेत के लिए श-कि नाम मिलता है जिसका उल्लेख फाहियान ने किया है। उसने श-कि को महान देश के रूप में उल्लिखित किया है। चीनी स्रोतों में इसका एक नाम श-कि-त (साकेत) भी मिलता है। इसमें कहा गया है कि म-मिंग (अश्वघोष) श-यि (श्रावस्ती) देश के श-कि-त का निवासी था। कनिंघम ने साकेत और अयोध्या को एक ही माना है। उनके अनुसार फाहियान की श-कि अथवा श-चि और ह्वेनसांग की विशाखा, साकेत अथवा अयोध्या ही है। रघुवंश महाकाव्य में साकेत और अयोध्या को एक-दूसरे का पर्यायवाची बताते हुए साकेत नगर को राजा दशरथ और उनके पुत्र की राजधानी के रूप में उल्लिखित किया गया है। दिव्यावदान में साकेत की व्याख्या इस प्रकार की गयी है-

स्वयभागतं स्वयभागतं साकेत साकेत मिति संज्ञ संकृत्ता ।।

यह आप ही आप आया आप ही आप आया। इसलिए साकेत नाम पड़ गया। संस्कृत में केत का अर्थ है बुलाना और आ उपसर्ग लगाने से अर्थ उलट जाता है। इसलिए साकेत का अर्थ हुआ अपने आप आना। 'स' लगा देने का अर्थ हुआ किसी के साथ आप से आप आना।[3]

अयोध्या का प्रथम सर्वेक्षण 1862-63 में एलेक्जेण्डर कनिंघम ने कराया। कनिंघम के सर्वेक्षण का मुख्य उद्देशय बौद्ध स्मारकों का पता लगाया जाना था। कनिंघम के सर्वेक्षण के अनुसार अयोध्या में गौतम बुद्ध ने छः वर्ष व्यतीत किये थे।

1889-91 में पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग दल ने जान फ्यूरर के नेतृत्व में पुनः सर्वेक्षण किया। इनके दल को अयोध्या के दक्षिणी ओर मिट्टी के तीन टीले मिले। ये टीले थे-मणिपर्वत टीला, कुबेर पर्वत टीला तथा सुग्रीव पर्वत टीला। कनिंघम व फ्यूरर ने इन टीलों की पहचान बौद्ध विहारों के रूप में की। जिनका उल्लेख ह्वेनसांग के वर्णन में हुआ है। दोनों ही सर्वेक्षकों के अनुसार हिन्दू व जैन मंदिर ऐतिहासिक काल के हैं। स्थानीय लोक संकेतकों को आधार मानकर फ्यूरर ने लिखा है कि मुस्लिम आक्रमण के समय अयोध्या में तीन मंदिर थे, जन्म स्थान (प्रभु राम का जन्म स्थान), स्वर्गद्वार व त्रेता का ठाकुर। फ्यूरर ने उल्लेख किया है कि 1523 ई. में जन्म स्थान पर बाबरी मस्जिद का निर्माण कराया था तथा मंदिर के कई प्रस्तर स्तम्भ मस्जिद निर्माण में प्रयुक्त किये गये। ये स्तम्भ काले प्रस्तर के थे जिन्हें स्थानीय लोग कसौटी कहते हैं। फ्यूरर के अनुसार औरंगजेब ने स्वर्गद्वार व त्रेता के ठाकुर के स्थान पर मस्जिद बनायी। फैजाबाद संग्रहालय में त्रेता के ठाकुर (मस्जिद) स्थान से विष्णु मंदिर का प्रमाण रखा है।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के अवध किशोर नारायण के नेतृत्व में 1969-70 में अयोध्या में उत्खनन कार्य किया गया। 1975-76 में पुरातत्व विभाग के सर्वेक्षण विभाग के महानिदेशक श्री बी.बी. लाल के नेतृत्व में एक अध्ययन कराया तथा 1975-76 में बी.बी. लाल ने 'रामायण के पुरातात्विक स्थलों' पर एक परियोजना पर कार्य प्रारम्भ किया। इस परियोजना के अंतर्गत अयोध्या में भी उत्खनन कार्य किया गया। जिसकी प्रारम्भिक रिपोर्ट 1989 में जमा की गयी तथा विस्तृत रिपोर्ट कतिपय विवादों के कारण पूरी नहीं हो सकी। जुलाई 1992 में आठ पुराविदों के

एक दल ने रामरोट की पहाड़ियों से प्राप्त अवशेषों का अध्ययन किया। वर्ष 2003 में पुनः पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने राम जन्म भूमि पर उच्च न्यायालय इलाहाबाद के निर्देशों के तहत उत्खनन कार्य करवाया।

अयोध्या में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा तीन अलग-अलग स्थलों का उत्खनन कराया गया। इस उत्खनन कार्य का मुख्य उद्देश्य सांस्कृतिक क्रम का निर्धारण करना था। इन तीन स्थलों में पहला स्थल जैन-घाट के निकट, दूसरा लक्ष्मण टेकरी और तीसरा नल-टीला पर है। इसमें प्रथम दो स्थलों (जैन-घाट के निकट और लक्ष्मण टेकरी) से तीन सांस्कृतिक कालों का पता चला है। प्रथम दो सांस्कृतिक कालों में निरन्तरता है, जबकि द्वितीय और तृतीय कालों के बीच समय का कुछ अंतराल है। तीसरे काल से मात्र प्रथम सांस्कृतिक काल का साक्ष्य प्राप्त होता है। प्रथम सांस्कृतिक काल में उत्तरी काले चमकीले मृद्भाण्ड तथा भूरे और लालापात्रों की प्राप्ति हुई। उस काल की जो अन्य वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं, उनमें पकी मिट्टी का चक्र, गेंद,पहिये, हड्डियों के वाणाग्र तथा ताँबे, शीशे और पकी मिट्टी के मनके सम्मिलित हैं। इस जमाव के ऊपरी हिस्से से 6 मानव मृण्मूर्तियाँ और भूरे रंग के पशुओं की मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। अयोध्या के दो सिक्के भी इसी जमाव में मिले हैं। कुछ लोहे वस्तुएँ भी प्राप्त हुई हैं।[4]

हिन्दू-धर्म और जैनमत की ही तरह बौद्धमत का भी अयोध्या से पावन नाता है। अंग्रेज विद्वान् डब्ल्यू. सी. बेनेट ने लिखा है-बौद्धमत की तो कोसल को जन्मभूमि ही माननी चाहिए। शाक्यमुनि की जन्मभूमि कृषिलवस्तु और निर्वाणभूमि कुशिनगर दोनों कोसल में थे। अयोध्या में उन्होंने अपने धर्म की शिक्षा दी और वे सिद्धान्त बनाये, जिनसे वे जगत्प्रसिद्ध हुए और कुशीनगर में उन्हें वह पद प्राप्त हुआ, जिसकी बौद्धमतवाले आकांक्षा करते और जिसे निर्वाण कहते हैं।

प्राचीन ग्रन्थों में अयोध्या और कोसल का साथ साथ उल्लेख किया गया है। वस्तुतः साम्राज्य का नाम कोसल और राजधानी का नाम अयोध्या है। आदिकवि भगवान् वाल्मीकि के अनुसार सरयू नदी के तट पर सन्तुष्ट जनों से पूर्ण, धनधान्य से परिपूर्ण, उत्तरोत्तर उन्नति को प्राप्त कोसल नामक एक बड़ा प्रदेश है। इसी प्रदेश में मनुष्यों के आदि राजा प्रसिद्ध महाराज मनु की बसायी हुई तथा तीनों लोक में विख्यात अयोध्या नामक एक नगरी है। कोसल को सूर्यवंश के चक्रवती सम्राटों का मुख्य साम्राज्य होने का गौरव प्राप्त था। कालान्तर में कोसल की जगह उत्तरकोसल का प्रयोग होने लगा। महान् वैयाकरण आचार्य पाणिनि ने अपने एक सूत्र में 'कोसल' शब्द का प्रयोग किया है- 'वृद्धेत्कोसलाजादाञ्ञ्यङ्।

कोसल के पश्चात् प्रयुक्त हुए 'उत्तरकोसल' पद से 'दक्षिणकोसल' के अस्तित्व का बोध होता है। सुप्रसिद्ध प्राच्यविद् डॉ. रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर (1837-1925 ई.) ने अपने ग्रन्थ "History of Deccan' में लिखा है कि विन्ध्याचल के पास के देश का नाम कोसल था। पुराणेतिहास में लिखा है कि भगवान् श्रीरामचन्द्र ने अपने ज्येष्ठ पुत्र कुश को कोसल का साम्राज्य दिया। कोसल की राजधानी कुशावती अथवा कुशस्थली विन्ध्य पर्वत के पास अवस्थित थी। यद्यपि आधुनिक विद्वानों ने सम्राट् कुश की राजधानी कुशावती की पहचान कौशाम्बी से की है, तथापि यह उचित प्रतीत नहीं होता है। पुराणों में कुशावती को विन्ध्याचल के पास बताया गया है। मिर्जापुर जनपद की लालगंज तहसील को 'उपरौध' कहते हैं, जो 'अपराध' का विकृत रूप है। अपरीध का अर्थ दूसरी अयोध्या है। इसी उपरोध क्षेत्र में आज भी ड्रमण् डगंज (दरामलगंज) के पास प्रयागराज जनपद की कोराँव तहसील में अयोध्या नामक गाँव और विजयपुर के पास कुशहा नामक गाँव अवस्थित है, जो सम्राट् कुश की राजधानी कुशावती की प्राचीन स्मृति को जीवन्त करते हैं। महाकवि कालिदास कृत 'रघुवंश' में सम्राट् कुश को कुशावती से अयोध्या जाते समय विन्ध्यगिरि और गंगा को पार करना पड़ता है-

व्यलङ्घयद्विन्ध्यमुपायनानि पश्यन्पुलिन्दैरुपपादितानि ।

तीर्थे तदीये गजसेतुबन्धात् प्रतीपगामुत्तरतोऽस्य गङ्गाम्।।

अर्थात् सम्राट् कुश, विन्ध्याचलवासी किरातों के हाथ से पायी हुई भेंट की सामग्रियाँ देखते हुए आगे बढ़ चले और पास ही उलटी पश्चिम की ओर बहनेवाली गंगा पर हाथियों का पुल बनाकर वे पार उतरने लगे।

सम्राट् हर्षवर्धन ने 'रत्नावली' में लिखा है कि कोसल देश के राजा विन्ध्यगिरि से घिरे हुए ये- 'विन्ध्यदुर्गावस्थितस्य कोसलनृपतेः ।

महाकवि कालिदास ने अयोध्या के लिए 'उत्तरकोसल' पद का प्रयोग किया है- 'पितुरनन्तरमुत्तरकोसलान् । भागवतपुराण में भी 'उत्तरकोसल' पद प्रयुक्त हुआ है, किन्तु भगवान् श्रीराम को कोसलेश्वर कहा गया है।

अयोध्या के भौगोलिक सन्दर्भों को व्याख्यायित करते हुए नन्दलाल डे लिखते हैं-'रामायण के काल में (1-अ. 49, 50) कोसल की दक्षिणी सीमा स्यन्दिका या सई, जो गोमती और गंगा के बीच में है, तक थी। बुद्ध के काल में कोसल उत्तरकोसल और दक्षिणकोसल में विभक्त था। सरयू नदी इन दो प्रान्तों को विभक्त करती थी। उत्तरकोसल की राजधानी राप्ती नदी पर बसी श्रावस्ती थी और दक्षिणकोसल की राजधानी सरयू पर स्थित अयोध्या थी। बुद्ध के काल में कोसल का राज्य प्रसेनजित के पिता महाकालेश्वर के अधिकार में था, जिसका विस्तार हिमालय से गंगा और रामगढ़ से गण्डक तक था। इस राज्य की प्राचीन राजधानी अयोध्या थी, जहाँ राम का जन्म हुआ था, उस स्थान को 'जन्मस्थान' नाम से पुकारते थे। चिरोदक या चिरसागर पर राजा दशरथ ने ऋषि ऋष्यशंग के सहयोग से पुत्र प्राप्ति के लिए पुत्रेष्टि यज्ञ किया था। त्रेता के ठाकुर' नामक स्थान पर रामचन्द्र ने सीता की प्रतिमा लगाकर अश्वमेध यज्ञ किया था। (कोई भी धार्मिक अनुष्ठान पत्नी-सहित किया जाता है और रामचन्द्र ने उन्हें वनवास दिया वा, अतः सीता के स्थान पर राम ने स्वर्णमयी सीता को बिठाया था। रत्नमण्डप में उन्हनि परिषद् की बैठक आहूत की थी (मुक्तिकोपनिषद्, अ. 1), स्वर्गद्वारम फ़ैज़ाबाद में उनका (राम का) अग्नि-संस्कार किया गया था। सरयू के लक्ष्मण-कुण्ड में लक्ष्मण ने जल-समाधि ली थी। ? फैजाबाद जिले के मझौरा नामक स्थान पर अन्धे (अन्धे माता-पिता) के पुत्र श्रवण को दशरथ ने दुर्घटनावश मार डाला था। जैन तीर्थंकर आदिनाथ का जन्म भी अयोध्या में हुआ था (फुहरर का एम.ए.आई.)। कुनिंघम ने सुग्रीव पर्वत की पहचान कालकाराम या महावंश के पूर्वाराम मह से, मणिपर्वत की पहचान हेनत्सांग द्वारा वर्णित अशोक के स्तूप से और कुबेर पर्वत की पहचान उस स्तूप से की है, जिसमें बुद्ध के बाल और नख सुरक्षित हैं (आक.स.रि. वायलूम-I)। ऐसा कहा जाता है कि मुश्रिपर्वत इस गन्धमादन पर्वत का ही एक भाग था, जिसे हनुमान् अपने सिर पर रखकर लंका ले गये थे (लक्ष्मण के मूर्च्छित हो जाने पर हनुमान् गन्दमादन पर्वत को हिमालय से लंका ले गये थे, जिसे भरत ने रोका था)। विक्रमादित्य (गुप्तवंश) जो वैदिक धर्म (ब्राह्मण धर्म) का उपासक था, ने ईसा की दूसरी शताब्दी में अयोध्या के इन पवित्र स्थानों का पुनरुद्धार किया था। कुछ विद्वान् यह पुनरुद्धार पाँचवीं शताब्दी में मानते हैं। इसी प्रकार सोलहवीं शताब्दी में (चौतन्य के शिष्य) रूप और सनातन ने वृन्दावन का पुनरुद्धार किया था। अयोध्या बौद्धों का साकेत और टोलेमी का सगद है।

अलेक्जेंडर कनिंघम का कहना है कि कोसल का प्राचीन देश सरयू अथवा घाघरा द्वारा दो प्रान्तों में विभक्त था; उत्तरी भाग को उत्तरकोसल और दक्षिणी भाग को बनौध कहते थे। फिर इन दोनों के और दो भाग थे। बनौघ में पश्चिम राठ और पूर्व राठ थे और उत्तरकोसल में राप्ती के दक्षिण में गौड़ और राप्ती या जिसे अवध में रावती कहते हैं उसके उत्तर को कोसल कहते थे। इनमें से कुछ के नाम पुराणों में भी पाये जाते हैं जैसे वायुपुराण में लिखा है कि रामचन्द्र जी के पुत्र लव कोसल में राज करते थे; और मत्स्य, लिंग एवं कूर्मपुराण में लिखा है कि श्रावस्ती गौड़ में थी। ये परस्परविरुद्ध कथन उसी क्षण समुचित रीति से समझ में आ जाते हैं, जब हम जानते हैं कि गौड उत्तरकोसल का एक भाग था और श्रावस्ती के खण्डहर भी गौड (सम्प्रति गोंडा) में मिले हैं। इस प्रकार अयोध्या घाघरा के दक्षिण में बनौध या अवध की राजधानी थी और श्रावस्ती घाघरा के उत्तर में उत्तरकोसल की राजधानी थी।[5]

अयोध्या का ज्ञात इतिहास वौद्धकाल से प्रारम्भ होता है। बौद्धकाल अथवा साहित्य में अयोध्या का नाम प्रायः बहुत कम मिलता है। किन्तु पालि बौद्ध साहित्य में साकेत और श्रावस्ती के नाम का उल्लेख किया गया है। वस्तुतः साकेत ही प्राचीन अयोध्या थी। कोशल राज्य की दूसरी राजधानी अयोध्या मानी गयी है और उस समय यह प्रमुख व्यापारिक केन्द्र और विशाल नगर में रूप में विकसित हो चुका था। बुद्ध-काल के उपरान्त मगध (बिहार) एक विशाल सम्राज्य के रूप में विकसित हुआ। बुद्धकाल में काशी और कोशल आपस में विलीन हो चुके थे। काशी मगध-शासकों को उपहार स्वरूप प्राप्त हुई। कालान्तर में कोशल और मगध के मध्य युद्ध हुआ और कोशल के शासकों ने काशी पर से अपना अधिकार छोड़ दिया। मगध के शासकों ने पुनः काशी पर अपना अधिकार प्राप्त किया। बिम्बसार को मारकर अजातशत्रु ने मगध पर शासन प्रारम्भकिया। मगध की सम्राज्यवादी प्रवृत्ति का विरोध तत्कालीन गणराज्यों द्वारा भी किया गया। परिणामतः ये गणराज्य भी मगध साम्राज्य में विलीन हो गये। कोशल मगध-राज्य का एक अंग था। फिर भी श्रावस्ती प्रमुख रूप से उदीयमान रहा और अयोध्या उपेक्षित हुई।

कालान्तर में मगध के साम्राज्य का पतन और मौर्यों का उदय भारतीय इतिहास का महत्त्वपूर्ण काल माना जाता है। मगध के नन्दवंशीय शासकों के पराभव के उपरान्त मौर्यों का उदय प्रारम्भ हुआ। चन्द्रगुप्त मौर्य मौर्य-वंश का प्रथम शासक था। चन्द्रगुप्त मौर्य के समय अयोध्या पूर्णतया क्रियाशील थी। यद्यपि ऐतिहासिक और पुरातात्त्विक दृष्टि से मौर्य-काल के बहुत कम ही अवशेष प्राप्त होते हैं। कनिंघम ने अयोध्या के कतिपय स्थलों का उल्लेख किया, इनमें मिट्टी के टीलेःयथा-मणिपर्वत, कुबेर-टीला और सुग्रीव-पर्वत महत्त्वपूर्ण हैं। चीनी यात्री ह्वेनसांग और फाहियान ने अपने यात्रा-वृत्तान्तों में अयोध्या में बौद्ध बिहारों की मौजूदगी का उल्लेख किया है। स्वाभाविकतः यह अनुमान लगाया जाता है कि सम्राट अशोक के समय अयोध्या में कतिपय बौद्ध-स्थल भी विकसित किये गये थे।

मौर्यों के सेनापति पुष्यमित्र शुंग ने अपने ही शासक वृहद्रथ की हत्या कर स्वयं को शासक घोषित किया और मौर्यों की विशाल सेना पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित किया। पुष्यमित्र शुंग वस्तुतः सनातन धर्म का कट्टर समर्थक था। उसने बौद्धों और यवनों को भी पराजित किया था। पुष्यमित्र शुंग के शासनकाल में अयोध्या का महत्त्व बढ़ रहा था। यद्यपि यहाँ का शासन पाटलिपुत्र से संचालित था। अयोध्या से प्राप्त अभिलेखों से यह विदित होता है कि यहाँ पर पुष्यमित्र शुंग ने दो अश्वमेध यज्ञ किये थे। कोशल के शासक धनदेव ने अपने पिता फल्गुदेव के लिए यहाँ महल का निर्माण कराया। अभिलेख में कोशलाधिप उपाधि से सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि धनदेव कोशल का स्थानीय शासक था और उसकी राजधानी अयोध्या थी।

अयोध्या में शुंग-वंश की एक शाखा देव-नामान्त शासकों का उल्लेख मुद्रा-शास्त्रीय साक्ष्य के आधार पर प्राप्त होता है। इनके सिक्के अयोध्या, श्रावस्ती, जौनपुर, आजमगढ़, इलाहाबाद, बक्सर, पटना आदि क्षेत्रों से प्राप्त हुए हैं जिनमें मूलदेव, वायुदेव, विशाखदेव, धनदेव, शिवदेव तथा पथदेव के सिक्के प्राप्त हुए हैं। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अयोध्या में पुष्यमित्र की एक शाखा ने शासन किया।

दत्त-नामान्त शासकों का उल्लेख भी सिक्कों के आधार पर प्राप्त होता है। इनमें नरदत्त, ज्येष्ठदत्त, दृढ़दत्त तथा शिवदत्त और रामदत्त (अन्तिम शासक) का उल्लेख प्राप्त होता है। इन शासकों ने प्रथम शताब्दी ईसवी के पूर्वार्द्ध तक शासन किया। कुषाण काल में अयोध्या के विषय में कोई विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती। किन्तु कुषाणों के उपरान्त अयोध्या से सम्बन्धित अजवर्मन, आयुमित्र, ध्रुवमित्र, कुमुदसेन, माधववर्मन, संघमित्र, सत्यमित्र और विजयमित्र महत्त्वपूर्ण हैं।

इनके उपरान्त अयोध्या सीधे गुप्त-वंशी शासकों के नियन्त्रण में आ गयी। सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि शुंग-शासकों के पराभव और गुप्तों के उदय के मध्य अयोध्या लगभग उपेक्षित-सी रही।[6]

अयोध्या के पुनरुद्धार के विषय में महाराज विक्रमादित्य का नाम उल्लेखनीय है जो कदाचित् गुप्त-वंशी शासक चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य थे।

यह भी साक्ष्य प्राप्त होता है कि गुप्तों के शासनकाल में अयोध्या की निश्चित रूप से उनकी एक राजधानी के रूप में विशिष्ट पहचान बन चुकी थी। यद्यपि पाटलिपुत्र उनकी मुख्य राजधानी रही होगी। समुद्रगुप्त के एक अभिलेख प्रयाग-प्रशस्ति में साकेत का स्पष्ट उल्लेख किया गया है जिसमें उन शासकों के द्वारा प्रयाग, साकेत और अयोध्या का स्पष्ट भोग करने की बात कही गयी है। काठियावाड़ी अनुश्रुति के अनुसार अयोध्या नगरी में भट्टारक नामक शासक को गुप्त-शासकों (स्कन्दगुप्त) ने परास्त कर अपना आधिपत्य जमाकर राजधानी के रूप में प्रयोग किया। भट्टारक नामक इस शासक के पूर्वज कदाचित् मित्र-नामान्त शासक थे जिन्होंने शुंगों के उपरान्त अयोध्या में शासन किया था। गुप्त-शासकों के काल में अयोध्या निश्चित रूप से अपने चरमोत्कर्ष पर थी। पुरातात्त्विक साहित्य तथा ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि सम्भवतः चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समय में अयोध्या राजधानी के रूप में प्रयुक्त होती थी। प्रयाग-प्रशस्ति में स्पष्ट उल्लिखित है कि समुद्रगुप्त को प्रयाग, साकेत और मगध उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त थे। चन्द्रगुप्त और समुद्रगुप्त के उपरान्त कुमारगुप्त का अधिकार-क्षेत्र भी अयोध्या-क्षेत्र में विद्यमान था। परवर्ती गुप्तों की निर्बलता और हूणों के आक्रमण के फलस्वरूप गुप्त-राजा पुनः अपनी राजधानी को लौट गये और अयोध्या पुनः ब्राह्मण साधुओं के वर्चस्व में आ गयी और क्रमशः बौद्धों का पतन हुआ।

गुप्तों का पतन हो जाने के उपरान्त अयोध्या का राजनीतिक महत्त्व कम हो गया और राजनीति के नये केन्द्र के रूप में कान्यकुब्ज विकसित हुआ। पाँचवीं शताब्दी के अन्त तक गुप्तों ने किसी प्रकार अपने प्रभुत्व को बनाये रखने का प्रयास किया। किन्तु छठी शताब्दी के प्रथम चरण में गुप्त-सम्राज्य के अन्तर्गत अनेक छोटे राजवंशों का प्रादुर्भाव हुआ जिनमें कन्नौज के मौखरि, थानेश्वर के पुष्यभूति तथा मालवा के परवर्ती गुप्त-शासक उल्लेखनीय हैं।[7]

अन्तिम समय में अयोध्या पर समुद्रपालवंशीय शासकों का नाममात्र का शासन भले ही रह गया था, किन्तु वास्तविक सत्ता कन्नौज केन्द्रित हो गयी थी। कन्नौज के बैसवंशीय सम्राट् हर्षवर्धन शीलादित्य (606-647 ई.) का अयोध्या पर प्रत्यक्ष शासन था। अयोध्या के भिटौरा ग्राम से महाराज प्रभाकरवर्धन प्रतापशील और सम्राट् हर्षवर्धन शीलादित्य के सिक्के प्राप्त हुए हैं। सम्राट् हर्षवर्धन शीलादित्य के समय में चीनी तीर्थयात्री हेनत्सांग ने अयोध्या का भ्रमण किया था। हेनत्सांग ने अयोध्या को 'ओ-यु-तो' कहा है।

सम्राट् हर्षवर्धन की मृत्यु के उपरान्त कन्नौज के इतिहास में लगभग 75 वर्ष का समय अन्धकाराच्छन्न है। समर्थ उत्तराधिकारी के अभाव में सम्राट् हर्षवर्धन का साम्राज्य शनैः शनैः विखण्डित हो गया। ऐसी स्थिति में अयोध्या पर घाघरा पार के श्रीवास्तव्य शासकों ने अधिकार कर लिया। अयोध्या पर श्रीवास्तव्यों का अत्यल्प शासन रहा। शीघ्र ही कन्नौज के सम्राट् यशोवर्मन् (725-752 ई.) ने अयोध्या पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। सम्राट् यशोवर्मन् के दरबारी महाकवि वाक्पतिराज ने प्राकृत भाषा में रचित गौडवहो काव्य में सम्राट् यशोवर्मन् के द्वारा हरिश्चन्द्रनगरी में श्रीरामजन्मभूमि-मन्दिर निर्मित करवाने का सुन्दर वर्णन किया है।[8]

सम्राट् यशोवर्मन के पश्चात उनके पुत्र आमराज, पौत्र दुन्दुक एवं प्रपौत्र भोज ने कन्नौज पर शासन किया। तीनों शासकों का शासनकाल 752 ई. से 770 ई. तक था। इसके बाद 40 वर्ष (770-810 ई.) तक कन्नौज की साम्राज्य लक्ष्मी आयुधवंश के तीन शासकों- वज्रायुध, इन्द्रायुध एवं चक्रायुद्ध के साथ रहीं। आयुद्धवंश के अन्तिम शासक चक्रायुध के सिर पर पाल-नरेश धर्मपाल (770-810 ई.) का वरदहस्त था। धर्मपाल के खालिमपुर-अभिलेख में कहा गया है कि उन्होंने कान्यकुब्ज के सम्राट् के रूप में स्वयं को

अभिषिक्त कराने का अधिकार प्राप्त करते हुए भी, पंचालदेश के प्रसन्न वृद्धों द्वारा उठाये गये अभिषेक-कलशों से कान्यकुब्ज के राजा का राज्याभिषेक कराया, जिसे भोज, मत्स्य, मद्र, कुरु, यदु, यवन, अवन्ति, गन्धार और कीर के राजाओं ने अपना सिर झुकाकर साधुवाद करते हुए स्वीकार किया। नारायणपाल का भागलपुर-अभिलेख इस सूचना को और अधिक स्पष्ट करते हुए बताता है कि धर्मपाल ने इन्द्रराज और अन्य शत्रुओं को हराकर महोदय (कन्नौज) नगर का अधिकार प्राप्त करते हुए भी उसे याचक चक्रायुध को वैसे ही वापस कर दिया जैसे बलि ने इन्द्र आदि शत्रुओं को जीतकर भी वामन रूप विष्णु को तीन लोकों का दान कर दिया था।" धर्मपाल के पुत्र देवपात (810-850 ई.) ने पिता की साम्राज्य विस्तारक नीति को आगे बढ़ाया। देवपाल के शासन के 33वें वर्ष के मुंगेर से प्राप्त होनेवाले ताम्रफलकाभिलेख में कहा गया है कि देवपाल की रणोन्मत्त सेनाओं ने विन्ध्याचल और कम्बोज तक अभियान किया। यह भी कहा गया है कि देवपाल ने रामचन्द्र के द्वारा बाँधे गये पुल (सुदूर दक्षिण में रामेश्वरम् के आगे) के पास तक की भूमि पर शासन किया। नारायणपाल के बादाल-स्तम्भ-लेख में कहा गया है कि रेवा अर्थात् नर्मदा के पिता (उद्गम स्थल) विन्ध्याचल और गौरी (पार्वती) के पिता हिमाचल के बीच स्थित पश्चिम पयोधि से पूर्व पयोधि तक के सम्पूर्ण क्षेत्र देवपाल के करद थे। देवपाल की गणना पाल राजवंश के सबसे बड़े विजेता के रूप में की जाती है। उन्होंने पाल साम्राज्य की अधिसत्ता का विस्तार पूर्व में कामरूप, दक्षिण में कलिंग और पश्चिम में विन्ध्य और मालवा तक किया। उनकी विजयिनी सेनाएँ दक्षिण में द्रविड प्रदेश (कांची) और उत्तर में तिब्बत तक गयीं तथा उन्होंने राष्ट्रकूटों और गुर्जर प्रतिहारों को अपने ही क्षेत्र में दबाये रखा।

कन्नौज के आयुधवंशीय नरेशों के समय कोसल जनपद कन्नौज का अभिन्न अंग था। प्रक्रायुध के अनन्तर कुछ समय तक अयोध्या पाल-नरेश धर्मपाल और देवपाल के भी अधीन रही, किन्तु शीघ्र ही कन्नौज के प्रतिहार नरेशों ने उत्तरापथ पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। प्रतिहार राजवंश का इतिहास अयोध्या के सूर्यवंश से ही सम्पृक्त है। प्रतिहार-नरेश मिहिरभोज (833-885 ई.) की ग्वालियर-प्रशस्ति के अनुसार मनु, इक्ष्वाकु तथा ककुत्स्थ जिस वंश के मूल सम्राट् थे, उनके ही वंशज और रावणान्तक राम के अनुज, जो राम के सशक्त प्रतिहार थे, और जिन्होंने मेघनाद जैसे शत्रु को युद्ध में परास्त किया था, उन लक्ष्मण से ही यह प्रतिहार वंश प्रचलित हुआ।इस कालावधि में भी अयोध्या कन्नौज के ही अधीन रही। अवधवासी लाला सीताराम लिखते हैं- 'आठवीं शताब्दी में अयोध्या कन्नौज के शासन में चली गयी। परिहारों का राज कन्नौज से 160 मील उत्तर श्रावस्ती से काठियावाड़ तक और कुरुक्षेत्र से बनारस तक फैला हुआ था।[9]

प्रतिहारों के समय में कोसलप्रान्त अथवा श्रावस्तीभुक्ति के भुक्तिपाल बैस क्षत्रिय थे। बैस राजवंश के राजा त्रिलोकचन्द्र ने सन् 918 ई. में दिल्ली के राजा विभवपाल को परास्त कर कोसलप्रान्त पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। श्रावस्तीभुक्ति का राज्य त्रिलोकचन्द्र के पुत्र भुक्तिपाल मयूरध्वज को मिला। उसके बाद क्रमशः त्रिलोकचन्द्र के वंशजों-हंसध्वज, मकरध्वज, सुधन्वाध्वज और सुहृदध्वज के अधिकार में ही श्रावस्तीभुक्ति का शासन रहा। भुक्तिपाल सुहृदध्वज की लोकप्रसिद्धि महाराज सुहेलदेव के नाम से है। महाराज सुहृदध्वज उपाख्य सुहेलदेव अत्यन्त वीर एवं साहसी शासक थे।

प्रतिहार वंश के बारहवें शासक त्रिलोचनपाल (1019-1035 ई.) के राजत्वकाल में महमूद गजनवी के भांजे सैयद सालार मसऊद ग़ाज़ी ने अयोध्या पर आक्रमण किया। 1033 ई. में सालार मसऊद ने अयोध्या के रामजन्मभूमि-मन्दिर को ध्वस्त करने की इच्छा से अयोध्या पर चढ़ाई की, किन्तु उस समय सम्राट् त्रिलोचनपाल की श्रावस्तीभुक्ति के महाबली भुक्तिपाल महाराज सुहेलदेव ने सत्रह स्थानीय राजाओं का संघ बनाकर सालार मसऊद से भयंकर युद्ध किया। महाराज सुहेलदेव ने 14 जून, 1033 ई. को बहराइच से 7 कोस दूर पयागपुर के सन्निकट घाघरा नदी के तट पर सालार मसऊद समेत उसकी सेना

को नष्ट कर डाला। सूर्यवंश की वैस क्षत्रिय शाखा में पैदा हुए महाराज सुहेलदेव की वीरता को अमरत्व प्रदान करने के लिए अवधप्रान्त के प्रतिष्ठित कवि कीर्तिशेष पण्डितु गुरुसहाय दीक्षित 'द्विजदीन' ने 'श्रीसुहेल-बावनी' का प्रणयन किया है। महाराज सुहेलदेव से सालार मसऊद के अत्याचार का वर्णन करते हुए रक्षा की गुहार करती प्रजा के मनोभावों का चित्रण करते हुए कविवर द्विजदीन लिखते हैं-

भानुकुल भूप विनै सुनौ श्री सुहेलदेव,
घाघरा पै घोर सेन घुमड़ति आवै है।
तोरत जनेऊ और काटत गऊगन त्यों,
झोंटी झूड़ि बाँधे झण्डा झुमइति आवै है।
कवि 'द्विजदीन' समुहान सूरमा न कोऊ,
मान गरुआन अति अकड़ति आवै है।
गजनी निवासी साहू सैयद सलार संग,
जीत की उमंग मुढ्यौ उमड़ति आवै है।।[10]

कन्नौज के परास्त होने पर शहाबुद्दीन गोरी ने ई० ११९४ में अवध पर आक्रमण किया और मखदूम शाह जूरन गोरी अयोध्या में मारा गया और वहीं इसकी समाधि बनी। परन्तु बख्तियार खिलजी ने सबसे पहिले अवध में राज्य प्रबन्ध किया और उसे सेना का एक केन्द्र बनाया । इसमें उसको बड़ी सफलता हुई, और उसने ब्रह्म-पुत्र तक अपने आधीन कर लिया। उसकी शक्ति इतनी बढ़ी कि दिल्ली के सुलतान कुतुबुद्दीन के मरने पर उसने अल्तमश को दास समझ कर उसकी आधीनता स्वीकार न की। उसके बेटे गयासुद्दीन ने बङ्गाल में स्वाधीन राज्य स्थापित कर दिया, परन्तु थोड़े ही दिनों में अयोध्या उसके वंश से छिन गई और बहराइच और मानिकपूर के बीच का प्रान्त दिल्ली के आधीन कर दिया गया। इसके पीछे हिन्दू बिगड़े और बहुत से मुसलमान मार डाले गये । हिन्दुओं को दमन करने के लिये शाहजादा नसीरुद्दीन दिल्ली से भेजा गया।

ई० 1236 और ई० 1242 में 'नसीरुद्दीन तबाशी और क्रम्र-उद्दीन तैरान अयोध्या के हाकिम रहे। ई० 1255 में बादशाह की माँ मलका जहाँ ने कतलरा खाँ के साथ विवाह कर लिया और अपने बेटे से लड़ बैठी, इस पर बादशाह ने उसे अयोध्या भेज दिया। यहाँ कतलरा खौं ने विद्रोह किया और बादशाह के वजीर बलबन ने उसे निकाल दिया और अर्सलां खाँ संजर को हाकिम बनाया। परन्तु ई० 1251 में वह भी बिगड़ बैठा और निकाल दिया गया। अमीर खाँ या अलप्तगीन उसके बाद हाकिम बनाया गया और उसने 20 वर्ष तक शासन किया। बादशाह ने उसे बागी तुगरल को परास्त करने की आज्ञा दी। परन्तु अलप्तगीन हार गया और बलबन की आज्ञा से उसका सिर काट कर अयोध्या के फाटक पर रख दिया गया। यह फाटक कहाँ था, इसका पता अभी तक नहीं लगा । तुरारल को भी उसी के लश्कर में कुछ लोगों ने छापा मार कर मार डाला। इसके थोड़े ही दिन पीछे अयोध्या के एक दूसरे हाकिम फरहत खाँ ने शराब के नशे में एक नीच को मार डाला। उसकी विधवा ने बलबन से फरयाद की। बलबन पहिले आप ही दास था, उसने फरहत खाँ के 500 कोड़े लगवाये और उसे विधवा को सौंप दिया।[11]

बादशाह कैकुबाद और उसके बाप बुगरा खाँ में भी यहीं मेल-मिलाप हुआ था। एक की सेना घाघरा के इस पार पड़ी थी और दूसरे की उस पार पड़ी थी। फरहत के निकाले जाने पर खान जहाँ अवध का हाकिम बना। उसी के शासन काल में हिन्दी, फारसी का सुप्रसिद्ध कुवि अमीर खुसरो दो वर्ष तक अयोध्या में रहा। यहीं की बोली में इसने फारसी-हिन्दी का कोश खालिकबारी रचा। उसके अनन्तर खिलजी वंश के संस्थापक जलालुद्दीन का भतीजा अलाउद्दीन अयोध्या का शासक रहा। परन्तु वह इलाहाबाद जिले के कड़ा नगर में रहता था और बहीं उसने अपने चचा का सिर कटवा कर उसके धड़ को गङ्गा के रेते में फेंकवा दिया था। इन्हीं दिनों मुसलमानों के अत्याचार से पीड़ित हो कर कुछ क्षत्रिय स्याम देश को चले गये और वहाँ अयोध्या नगर बसाया जो आज-कल के नक्शों में जूथिया कहलाता है।

इस नगर में एक बड़ा साम्राज्य स्थापित किया गया जिसका लोहा चीन वाले भी मानते थे । यह राज्य ई० 1350 से 1757 तक रहा। इस्वी सन् की चौदहवीं शताब्दी में अयोध्यापुर का आश्रित् राजा संकोशी (श्री भोज) इतना प्रबल हो गया था कि उसने चीन के राजदूत को मार डाला। इस पर चीन के सम्राट मिंग ने अयोध्यापुर के राजा से विनती की कि अपने आश्रित को समझा कर शान्त कर दो।

इन्हीं दिनों स्वामी रामानन्द प्रकट हुये। भविष्य पुराण में लिखा है :-

रामानन्द शिष्यो 'अयोध्यायामुपागतः

गले च तुलसी माला जिह्वा राममयी कृता ।

अनुवाद - "स्वामी रामानन्द का चेला अयोध्या गया। वहाँ उसने बहुत से मुसलमानों को वैष्णव बनाया। उन्हें तुलसी की माला पहनायी और राम राम जपना सिखाया।"

खिलजी के पीछे तुगलक वंश दिल्ली के सिंहासन पर बैठा । तुरालकों के समय में अयोध्या पर विशेष कृपा दृष्टि रही। तारीख फीरोजशाही में लिखा है कि मुहम्मद बिन तुगलक ने गंगा तट (تاريخ فيروز شاهي) पर एक नगर बसाना चाहा था जिसका नाम उसने स्वर्गद्वारी (स्वर्ग-द्वार) रक्खा । मुसलमान बादशाह को हिन्दी नाम क्यों पसन्द आया इसका कारण हमारी समझ में यही आता है कि उस समय अयोध्या का वह भाग जिसे आज-कल स्वर्गद्वारी कहते हैं, अत्यन्त सुन्दर और समृद्ध था। फिरोज तुगलक पहली बार ई० 1324 में और दूसरी बार ई० 1348 में अयोध्या आया। उसके समय में मलिक सिग्रीन और आयीनुलमुल्क अयोध्या के शासक रहे। अकबरपूर में एक छोटे मक्तबरे में एक शिला लेख है जिससे प्रकट होता है कि उस समय मुसलिम राज स्थिर हो गया था और धर्मार्थ जागीरें लगायी जाती थीं। थोड़े दिन पीछे अयोध्या जौनपूर की शरक़्क़ी बादशाही में मिल गया ।[12]

अंत में, यह कह सकते हैं कि अयोध्या जो प्राचीन साकेत नगर के रूप में जाना जाता था इसकी स्थापना मनु ने धर्म और न्याय पर आधारित व्यवस्था स्थापित करने के लिए किया अयोध्या हिंदू धर्म , बौद्ध धर्म, जैन धर्म की पवित्र तीर्थ स्थल के रूप में प्रसिद्ध हैं अयोध्या प्रारम्भ में कोशल महाजनपद के अन्तर्गत था। यह बाद में मगध सम्राज्य के अन्तर्गत शामिल हो गया। जिसके अन्तर्गत मौर्य वंश शुंग वंश, गुप्त वंश के शासको के अन्तर्गत शासित रहा। बाद में अवध के नवाबों के काल में अयोध्या एक प्रमुख राजनीतिक और धर्मिक स्थल बना रहा। इस प्रकार अयोध्या का महत्व प्राचीन काल से ही एक प्रमुख नगर के रूप में विख्यात रहा।

संदर्भ ग्रंथ- सूची

1. आनंद , अरुण, रामजन्मभूमि आंदोलन की संघर्ष गाथा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2024,पृ.22
2. सिंह, नीतू, फैजाबाद:सांस्कृतिक गजेटियर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 31-32
3. वही, पृ. 33-34
4. वही, पृ. 53-54
5. सिंह, जितेंद्र कुमार, उत्तर प्रदेश का स्वतंत्रता संग्राम अयोध्या, लेखश्री प्रकाशन, नई दिल्ली, 2023, पृ. 18-19
6. वही, पृ. 20
7. सिंह, शीतला, अयोध्या रामजन्मभूमि- बाबरी- मस्जिद, कोशल पब्लिशिंग हाउस, फैजाबाद, 2019, पृ. 238-39
8. वही, पृ. 240
9. सिंह, जितेंद्र कुमार, उत्तर प्रदेश का स्वतंत्रता संग्राम अयोध्या, लेखश्री प्रकाशन, नई दिल्ली,2023 , पृ. 33-34
10. वही, पृ. 35
11. लाला सीताराम, अवधवासी, अयोध्या का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2022,पृ. 147-48
12. वही, पृ. 149-50